

छात्राध्यापकों के शिक्षण विषयों के परिप्रेक्ष्य में संवेगात्मक बुद्धि, समायोजन का अध्ययन

अवनीश कुमार

जे0 एस0 विश्वविद्यालय, शिकोहाबाद, फिरोजाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

समाज और राष्ट्र के विकास में शिक्षक की भूमिका केंद्रीय और निर्णायक होती है। शिक्षक केवल पाठ्यविषय का अध्यापन करने तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह ज्ञान, संस्कृति, नैतिक मूल्यों और आधुनिक कौशलों को एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी तक पहुँचाने वाला सेतु होता है। शिक्षक के जरिया से ही समाज की बौद्धिक चेतना जीवित रहती है और राष्ट्र की वैचारिक दिशा निर्धारित होती है। प्रसिद्ध दार्शनिक डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन के विचारों के अनुरूप कहा जा सकता है कि शिक्षक सभ्यता की लौ को निरंतर प्रज्वलित रखने वाला मार्गदर्शक होता है। वस्तुतः शिक्षक के अभाव में शिक्षण संस्थान केवल ईट-पत्थर की संरचना बनकर रह जाते हैं।

मनुष्य अन्य प्राणियों से इस कारण भिन्न है कि वह पूर्ववर्ती पीढ़ियों द्वारा अर्जित ज्ञान को समझने, अपनाने और आगे बढ़ाने की क्षमता रखता है। ज्ञान के विकास की पद्धति को तीन मुख्य चरणों में समझा जा सकता है—ज्ञान का संचय, उसका प्रभावी प्रसारण तथा उसमें सतत वृद्धि। ये तीनों ही आयाम शिक्षण की पद्धति से प्रत्यक्ष रूप से जुड़े हुए हैं। शिक्षण में शिक्षक और छात्र दोनों सक्रिय सहभागी होते हैं, जिससे यह पद्धति जीवंत और सृजनात्मक बन जाती है। शिक्षण की प्रभावशीलता केवल पाठ्यक्रम या शिक्षण विधियों पर निर्भर नहीं करती, बल्कि शिक्षक के व्यक्तित्व, दृष्टिकोण और आचरण में निहित होती है।

मूल शब्द: शिक्षण, समाज, राष्ट्र, अध्यापन, सृजनात्मक

शिक्षण को मात्र सूचना प्रदान करने की पद्धति मानना उसके व्यापक उद्देश्य को सीमित करना होगा। वास्तव में शिक्षण व्यक्ति के नैतिक, सामाजिक और बौद्धिक विकास का समन्वित जरिया है। शिक्षण का लक्ष्य ऐसे नागरिकों का निर्माण करना है जो उत्तरदायी, चरित्रवान और समाज के प्रति संवेदनशील हों। लोकतंत्र, समानता और सामाजिक न्याय जैसे मूल्यों की स्थापना में शिक्षण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। शिक्षण व्यक्ति की सोच को परिवर्तित कर सामाजिक कुप्रथाओं, अज्ञान और असमानताओं को चुनौती देती है।

शिक्षण का अर्थ

शिक्षण एक ऐसी सतत पद्धति है जो जीवन भर चलती रहती है और जिसका उद्देश्य व्यक्ति को विकसित करना तथा उसे सही दिशा प्रदान करना होता है। समाज और राष्ट्र के हर क्षेत्र में शिक्षण ने अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। इसकी जड़ें इतनी मजबूत होती हैं कि समय की आंधी भी इसे नहीं हिला सकती। शिक्षण कोई पुरानी, टूट-फूट वाली संरचना नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी मजबूत नींव है जो राष्ट्र के भविष्य को आकार देती है। यही कारण है कि शिक्षण वर्तमान समय को बेहतर बनाती है और आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिए व्यक्ति को तैयार करती है।

मानव जीवन में निरंतर चुनौतियाँ और कठिनाइयाँ आती रहती हैं। शिक्षण व्यक्ति को इन समस्याओं से निपटने की क्षमता देती है और उसे आत्मविश्वास के साथ आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करती है। शिक्षण ही व्यक्ति को अपने दायित्वों और जिम्मेदारियों का बोध कराती है—कृपाहे वे पारिवारिक हों, सामाजिक हों या राष्ट्रीय हों। अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों की समझ भी शिक्षण के जरिया से ही विकसित होती है।

एक शिक्षित व्यक्ति अपने ज्ञान को केवल अपने तक सीमित नहीं रखता, बल्कि अपने परिवार, समाज और आने वाली पीढ़ियों तक इसे पहुँचाने का प्रयत्न करता है। यह सत्य है कि शिक्षण केवल किताबों का ज्ञान नहीं है; यह जीवन जीने की कला है। इस संदर्भ में गुरु की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। गुरु के बिना शिक्षण अधूरी मानी जाती है, जैसे शरीर बिना प्राण के अधूरा है।

भारतीय संस्कृति में गुरु को ईश्वर के समान मान्यता दी जाती है, क्योंकि गुरु ही शिष्य को अज्ञान के अंधेरे से निकालकर ज्ञान के प्रकाश की ओर ले जाता है।

शिक्षण व्यक्ति की अंदरूनी क्षमताओं और प्रतिभाओं को जागृत करती है। यह एक ऐसी शक्ति है जो व्यक्ति को सोचने, समझने और सही निर्णय लेने की क्षमता प्रदान करती है। शिक्षण व्यक्ति को यह समझना सिखाती है कि क्या सही है और क्या गलत, और यह व्यक्ति के समग्र व्यक्तित्व निर्माण में अहम भूमिका निभाती है।

आधुनिक युग में सूचना और संचार प्रौद्योगिकी ने शिक्षण को अधिक गतिशील और विद्यार्थी-केंद्रित बना दिया है। आज विद्यार्थी रेडियो, टेलीविजन, कंप्यूटर, इंटरनेट और डिजिटल माध्यमों के जरिए अपने सवालों का समाधान स्वयं कर सकते हैं। ये तकनीकी साधन न केवल ज्ञान प्राप्ति में सहायक हैं, बल्कि जानकारी को संग्रहित करने, उसका विश्लेषण करने और आवश्यकता पड़ने पर उसे पुनः प्राप्त करने में भी मदद करते हैं। प्रसिद्ध शिक्षणविद फ्रॉबेल ने बालक के विकास को एक सुंदर उदाहरण के जरिए समझाया है। उनके अनुसार, जैसे एक बीज में वृक्ष बनने की सभी संभावनाएँ पहले से मौजूद होती हैं, उसी तरह बालक में भी उसकी संपूर्ण विकास क्षमता अंतर्निहित होती है। वृक्ष बिना माली के भी बढ़ सकता है, लेकिन एक कुशल माली की देखभाल में वह सही दिशा और सही आकार में विकसित होता है। इसी प्रकार, एक योग्य शिक्षक बालक की छिपी क्षमताओं को सही दिशा में विकसित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

किसी भी राष्ट्र या समाज के सही दिशा-निर्देशन के लिए शिक्षक वह महत्वपूर्ण तत्व है जो पूरे शिक्षात्मक वातावरण को जीवन प्रदान करता है। एक स्वस्थ और प्रगतिशील समाज की स्थापना तभी संभव है जब शिक्षण व्यवस्था में प्रशिक्षित, संवेदनशील और समर्पित शिक्षक मौजूद हों। परीक्षणकर्ता के रूप में यह अपेक्षा की जाती है कि हमारे देश के माध्यमिक विद्यालयों में ऐसे शिक्षक हों, जो केवल पाठ्यक्रम पढ़ाने तक सीमित न रहें, बल्कि नई पीढ़ी को नैतिक, बौद्धिक और सामाजिक रूप से सशक्त नागरिक बनाने का काम करें।

माध्यमिक शिक्षण आयोग (1966) ने प्रत्यक्ष किया है कि राष्ट्र का भविष्य विद्यालय की कक्षाओं में तैयार होता है। कक्षा वह स्थल है जहाँ देश की आने वाली पीढ़ी का निर्माण होता है।

किसी भी राष्ट्र की वास्तविक उन्नति तभी संभव है जब उसके प्रत्येक नागरिक को शिक्षण का अधिकार और अवसर प्राप्त हो। शिक्षण का महत्व केवल रोजी-रोटी कमाने तक सीमित नहीं होना चाहिए, बल्कि इसे समाज के समग्र विकास और कल्याण से जोड़ा जाना चाहिए। शिक्षण न केवल व्यक्ति की बौद्धिक क्षमता को बढ़ाती है, बल्कि यह राष्ट्रीय एकता के साथ-साथ वैश्विक समझ और सहयोग की भावना भी उत्पन्न करती है। यह व्यक्ति को अपने आसपास के समाज, संस्कृति और विश्व की जटिलताओं को समझने में मदद करती है तथा आत्मविश्वास और आत्मसम्मान को मजबूत बनाती है।

सरकार द्वारा शिक्षण के क्षेत्र में अनेक योजनाएँ और कार्यक्रम लागू किए जा रहे हैं ताकि देश के हर हिस्से में शिक्षण की पहुँच सुनिश्चित हो सके। इन पहलों का लक्ष्य केवल विद्यालयों की संख्या बढ़ाना नहीं है, बल्कि शिक्षण की गुणवत्ता में सुधार लाकर सभी वर्गों को समान अवसर प्रदान करना भी है। विशेषकर वंचित, पिछड़े और हाशिए पर रहने वाले समुदायों तक शिक्षण की पहुँच बढ़ाने के लिए विशेष नीतियाँ बनाई जा रही हैं।

शिक्षण केवल स्कूल या कॉलेज तक सीमित नहीं है; यह जीवन के विभिन्न अनुभवों और स्रोतों से प्राप्त होती है। टेलीविजन, विज्ञान, इतिहास, यात्रा, व्यक्तिगत अनुभव, साहित्य और आधुनिक डिजिटल जरियाकृत्य सभी शिक्षण के प्रभावी साधन हैं। इन माध्यमों से प्राप्त ज्ञान व्यक्ति की सोच को व्यापक बनाता है और उसे जीवन के विविध पहलुओं से परिचित कराता है।

शिक्षण व्यक्ति को अपने जीवन के उद्देश्य को पहचानने और उसे प्राप्त करने की दिशा दिखाती है। यह लक्ष्य-निर्धारण का मार्ग बनाती है और व्यक्ति के व्यक्तित्व को परिपक्व बनाती है। यदि शिक्षण न हो तो मनुष्य और पशु के बीच का फर्क समाप्त हो जाएगा, क्योंकि विवेक, नैतिकता और संवेदनशीलता का विकास केवल शिक्षण से ही संभव है। शिक्षण एक द्विपक्षीय पद्धति है, जिसमें शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों एक-दूसरे से सीखते हैं और एक-दूसरे पर प्रभाव डालते हैं। इस पारस्परिक संबंध के कारण ही शिक्षण एक जीवंत और प्रभावशाली पद्धति बनती है।

इस प्रकार शिक्षण न केवल व्यक्ति को दिशा देती है, बल्कि समाज और राष्ट्र के भविष्य की मजबूत नींव भी तैयार करती है। जीवन को संतुलित, संस्कारित और विवेकपूर्ण बनाने में शिक्षण की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है।

परीक्षण की आवश्यकता एवं महत्व उपर्युक्त तालिका के अनुसार निष्कर्ष

उपर्युक्त तालिका में पुरुष तथा महिला अध्यापक-प्रशिक्षु की संवेगात्मक बुद्धिमत्ता से संबंधित आंकड़े दर्शाए गए हैं। तालिका के अनुसार पुरुष समूह का औसत 204.08 तथा महिला समूह का औसत 203.88 पाया गया। इसी प्रकार, पुरुषों का मानक विचलन 2.17 और महिलाओं का 2.58 निकला।

दोनों समूहों के बीच फर्क की महत्वपूर्णता की जांच करने हेतु क्रांतिक परीक्षण किया गया, जिसका मान 0.83 प्राप्त हुआ। यह मान 0.05 के महत्व स्तर पर 1.96 तथा 0.01 के महत्व स्तर पर 2.58 से कम है। इसका अर्थ यह है कि पुरुष और महिला छात्राध्यापकों की संवेगात्मक बुद्धिमत्ता में कोई विशेष भिन्नता नहीं है। इसलिए इस परीक्षण की पहली परिकल्पना को स्वीकार किया गया।

अर्चना सक्सेना (2015) ने "आधुनिक और देशज माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धिमत्ता, आध्यात्मिक बुद्धिमत्ता एवं मूल्यों का सापेक्ष परीक्षण" शीर्षक से परीक्षण किया। इस परीक्षण में 1000 विद्यार्थियों का वरण यादृच्छिक विधि से

किया गया, जिसमें 500 विद्यार्थी आधुनिक माध्यमिक विद्यालयों और 500 विद्यार्थी देशज माध्यमिक विद्यालयों से थे। परीक्षण में सर्वेक्षण विधि अपनाई गई और संवेगात्मक बुद्धिमत्ता मूल्यांकन के लिए हाइड, पेथी एवं उपिन्दर धार (2002) द्वारा तैयार की गई सूची का उपयोग किया गया। इस परीक्षण के निष्कर्षों के अनुसार आधुनिक और देशज माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की संवेगात्मक बुद्धिमत्ता के स्तर में कोई विशेष भिन्नता नहीं पाया गया।

सुमन देवी एवं बी. पाण्डेय (18 मई 2016) ने अहमदाबाद जिले के शहरी और ग्रामीण उच्च माध्यमिक विद्यालयों में विज्ञान तथा कॉमर्स स्ट्रीम के छात्र-छात्राओं की संवेगात्मक बुद्धिमत्ता का परीक्षण किया। इस परीक्षण के लिए कुल 2000 विद्यार्थियों का वरण किया गया, जिसमें 1000 छात्र और 1000 छात्राएँ शामिल थीं। परीक्षण में सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया और उपकरण के रूप में मंगल एवं मंगल की संवेगात्मक बुद्धिमत्ता सूची (एम.पी.पी.) का उपयोग किया गया। नतीजों से प्रत्यक्ष हुआ कि शहरी और ग्रामीण क्षेत्र के उच्च माध्यमिक विद्यालयों में विज्ञान तथा कॉमर्स स्ट्रीम के छात्रों की संवेगात्मक बुद्धिमत्ता के स्तर में कोई विशेष भिन्नता नहीं है।

हम किसी भी काम को करते समय अपने बुद्धि का सहारा लेते हैं। बुद्धि का उपयोग सकारात्मक रूप से भी हो सकता है और नकारात्मक रूप से भी। किसी भी परिस्थिति में—चाहे वह डर हो, क्रोध हो या उत्साहकृहम अपने निर्णय बुद्धि के अनुसार ही लेते हैं। भावनाओं के प्रभाव में कभी हम साहसी और प्रशंसनीय कार्य करते हैं, तो कभी ऐसे काम भी कर बैठते हैं जो अनावश्यक या अनुचित होते हैं। इसी प्रकार, भावनाएँ और बुद्धि का संबंध बहुत घनिष्ठ है। जब भावनाएँ नियंत्रित हों और बुद्धि के साथ संतुलित हों, तभी व्यक्ति का आचरण सामाजिक और नैतिक रूप से उचित बनता है। इसलिए इस परीक्षण में संवेगात्मक बुद्धिमत्ता का मूल्यांकन किया गया है।

संवेगात्मक बुद्धिमत्ता का अर्थ है कि व्यक्ति अपनी और दूसरों की भावनाओं को पहचानने, समझने और नियंत्रित करने में सक्षम हो। यह व्यक्ति की सामाजिक समझ, आत्म-नियंत्रण, सहानुभूति, तथा संवेगात्मक स्थिरता का परिचायक होती है।

प्लेटो का यह विचार है कि "प्रत्येक सीखने की पद्धति के पीछे भावनाओं की भूमिका होती है।" यह बात प्रत्यक्ष करती है कि बच्चे के संवेगात्मक अनुभव उसका शैक्षिक जीवन प्रभावित करते हैं। यदि विद्यार्थी का मन शांत, संतुलित और सकारात्मक होता है, तो वह सीखने में अधिक रुचि दिखाता है और सफलता प्राप्त करता है। वहीं, यदि उसके भावनाएँ अस्थिर हों, तो उसकी सीखने की क्षमता प्रभावित हो सकती है।

संवेगात्मक बुद्धिमत्ता का महत्व केवल शिक्षात्मक उपलब्धि तक सीमित नहीं है, बल्कि यह जीवन के कई क्षेत्रों में प्रभावी होती है जैसे यौन शिक्षण, व्यावसायिक प्रशिक्षण, नशा से मुक्ति, आत्महत्या रोकथाम, हिंसा नियंत्रण और सामाजिक एकता। जिन विद्यार्थियों में संवेगात्मक बुद्धिमत्ता अधिक होती है, वे न केवल बेहतर सीखते हैं, बल्कि सहपाठियों और शिक्षकों के साथ बेहतर संवाद स्थापित कर पाते हैं। उनका आत्मविश्वास अधिक होता है और वे सामाजिक रूप से अधिक मजबूत होते हैं।

इस प्रकार, किसी भी विद्यार्थी की शिक्षात्मक दक्षता और सामाजिक व्यवहार पर संवेगात्मक बुद्धिमत्ता का स्तर महत्वपूर्ण प्रभाव डालता है।

समस्या की उत्पत्ति एवं उसका औचित्य

शिक्षण की पद्धति मुख्यतः तीन कार्यकृत्यशिक्षण, प्रशिक्षण और मार्गदर्शन—के जरिया से आगे बढ़ती है। ये तीनों कार्य शिक्षण के लक्ष्यों को प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं और किसी भी विद्यालयी प्रणाली की रीढ़ माने जाते हैं। फिर भी यह सत्य है

कि केवल इन क्रियाओं से मानवीय मूल्यों का विकास पूर्ण रूप से संभव नहीं होता। इसलिए यह धारणा व्यापक रूप से स्वीकृत है कि "मूल्यों को सीधे सिखाया नहीं जा सकता", बल्कि उन्हें व्यक्ति के मन में धीरे-धीरे रचे-बसे अनुभवों के जरिया से विकसित किया जाता है। मूल्य किसी विषय की तरह पढ़कर याद किए जाने योग्य चीजें नहीं होते; वे व्यक्ति के व्यवहार, सोच और जीवन दृष्टि का हिस्सा बन जाते हैं। जब कोई व्यक्ति किसी मूल्य को केवल सुनता या पढ़ता है, तो वह केवल जानकारी प्राप्त करता है, लेकिन जब वही मूल्य उसके अनुभवों, सामाजिक परिवेश और जीवन-पद्धति के जरिया से उसके व्यक्तित्व में समाहित हो जाते हैं, तभी वह वास्तव में मूल्यवान बनता है। इसलिए कहा जाता है कि मूल्य "सीखने" की बजाय "अभ्यास" द्वारा विकसित होते हैं।

सुकरात का मानना था कि शिक्षण स्वयं नैतिकता का संवाहक है और ज्ञान स्वाभाविक रूप से अच्छे विचारों को बढ़ावा देता है। इसका अर्थ यह है कि शिक्षण केवल ज्ञान-संग्रह नहीं है, बल्कि यह व्यक्ति में नैतिक गुणों, सकारात्मक सोच और सामाजिक जिम्मेदारी का विकास करती है। शिक्षण का यह पक्ष न केवल व्यक्तिगत उन्नति के लिए आवश्यक है, बल्कि समाज के सामूहिक विकास और राष्ट्रीय एकता के लिए भी अनिवार्य है। शिक्षण का ध्येय केवल पेशेवर दक्षता या आर्थिक उन्नति नहीं हो सकता; इसका मूल लक्ष्य व्यक्ति को नैतिक, संवेदनशील और जिम्मेदार नागरिक बनाना भी है।

भारतीय समाज में सदियों से ऐसे कई सांस्कृतिक और नैतिक मूल्य प्रचलित रहे हैं, जिन्हें बिना किसी प्रतिकूल प्रभाव के संजोया और पुनरावृत्ति किया जा सकता था। समय के साथ शिक्षण से संबंधित विभिन्न आयोगों और समितियों ने भी यह प्रत्यक्ष किया है कि मूल्य शिक्षण को विद्यालयों में नियमित रूप से शामिल किया जाना चाहिए। कोटारी आयोग, अन्य शिक्षण आयोगों और नई शिक्षण नीति (1986) तथा उसके बाद के संपरीक्षणनों ने लगातार इस बात पर जोर दिया है कि मूल्य शिक्षण न केवल आवश्यक है, बल्कि यह शिक्षण प्रणाली का अविभाज्य हिस्सा होनी चाहिए। यह इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि किसी भी देश की शैक्षिक सोच का आधार उसके सामाजिक और नैतिक मूल्य होते हैं। यदि शिक्षण प्रणाली में नैतिक दृष्टिकोण न हो, तो वह केवल तकनीकी और व्यावसायिक ज्ञान तक सीमित रह जाएगी और समाज में मानवीय संवेदनाएँ तथा नैतिकता कमजोर पड़ सकती है। ऐसे में देश की प्रगति भी प्रभावित हो सकती है।

भारत एक बहु-सांस्कृतिक, बहु-धार्मिक और बहुभाषी देश है। इस विविधता के बावजूद यदि शिक्षण के जरिया से ऐसे मूल्य विकसित किए जाएँ जो सभी समुदायों द्वारा स्वीकार्य हों, तो सामाजिक एकता और सामंजस्य को बल मिलता है। इसलिए मूल्य शिक्षण में वह दृष्टिकोण अपनाना चाहिए जो हमारी राष्ट्रीय विरासत, सांस्कृतिक पहचान और सार्वभौमिक मानवीय सिद्धांतों को एक साथ जोड़ सके। इस संदर्भ में यह आवश्यक है कि विद्यालयों में मूल्य शिक्षण केवल पाठ्यपुस्तक आधारित न रहे, बल्कि इसे व्यवहारिक और अनुभवात्मक रूप में लागू किया जाए। क्योंकि मूल्य तभी प्रभावी रूप से विकसित होते हैं जब वे जीवन के वास्तविक अनुभवों से जुड़कर व्यक्ति के व्यवहार का हिस्सा बनें।

इस पद्धति में शिक्षक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। छात्र के व्यक्तित्व के निर्माण में शिक्षक का प्रभाव बहुत अधिक होता है, क्योंकि शिक्षक केवल ज्ञान का स्रोत नहीं होते, बल्कि वे छात्रों के दृष्टिकोण, व्यवहार और नैतिकता को भी प्रभावित करते हैं। इसलिए शिक्षकों को केवल विषय शिक्षण में ही निपुण नहीं होना चाहिए, बल्कि उन्हें कक्षा में होने वाली अन्तः क्रियाओं, विद्यार्थियों के संवेगात्मक वातावरण और सामाजिक परिस्थितियों को भी

समझना चाहिए। इसी समझ के अनुसार वे ऐसा वातावरण तैयार कर सकते हैं जिसमें विद्यार्थी नैतिक मूल्यों को आत्मसात कर सकें। कक्षा में संवाद, समूह कार्य, चर्चा, सहानुभूति और सहयोग जैसी गतिविधियाँ मूल्य शिक्षण के लिए उपयुक्त अवसर प्रदान करती हैं। इसके साथ ही कक्षा के बाहर भी शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि विद्यालय की दिनचर्या, अनुशासन, सहपाठी संबंध और सामाजिक व्यवहार—ये सभी मूल्य निर्माण के स्रोत बनते हैं।

राष्ट्रीय शिक्षण नीति 1986 की समीक्षा के दौरान आचार्य राममूर्ति समिति ने शिक्षण के उद्देश्य, भूमिका और मूल्यों पर विस्तृत विचार प्रस्तुत किए। समिति ने यह प्रत्यक्ष किया कि शिक्षण केवल ज्ञान अर्जित करने का साधन नहीं है, बल्कि यह समाज में नैतिकता और मानवीय संवेदनशीलता को विकसित करने का एक प्रभावशाली जरिया है। महात्मा गांधी द्वारा प्रतिपादित अहिंसा और शोषण-रहित समाज की स्थापना को शिक्षण का प्रमुख लक्ष्य माना गया। समिति ने शिक्षण को केवल आर्थिक प्रगति या रोजगार की दिशा में केंद्रित पद्धति नहीं माना, बल्कि इसे ऐसे जरिया के रूप में देखा जो व्यक्ति में स्वतंत्रता की भावना, समानता और न्याय की समझ विकसित करे। इस संदर्भ में शिक्षण को एक ऐसी पद्धति बताया गया जो व्यक्ति को मानसिक, सामाजिक और आर्थिक रूप से सक्षम बनाकर समाज में व्याप्त कुरीतियों, भेदभाव और असमानता के खिलाफ जागरूकता पैदा करे।

समिति की सिफारिशों के अनुसार शिक्षण का वास्तविक उद्देश्य मुक्ति की भावना को उत्पन्न करना है। आज के समय में यह मुक्ति केवल राजनीतिक या आर्थिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं है, बल्कि जाति, लिंग, धर्म, क्षेत्र, सामाजिक स्थिति आदि के अनुसार होने वाले भेदभाव, अंधविश्वास, निराधार भय और पूर्वाग्रहों से मुक्त होना भी है। अर्थात् शिक्षण का सामाजिक पक्ष यह मांग करता है कि शिक्षण केवल ज्ञान-संग्रह का साधन न रहे, बल्कि यह व्यक्ति के भीतर नैतिकता, मानवीय मूल्य और सामाजिक संवेदनशीलता को विकसित करे। साथ ही यह भी आवश्यक है कि राष्ट्र आधुनिक विचारों और वैश्विक प्रभावों को अपनाने में विवेकशील और सतर्क बने। गांधीजी की दृष्टि में आधुनिकता को स्वीकार करने की क्षमता होनी चाहिए, पर यह भी सुनिश्चित करना चाहिए कि आधुनिकता के प्रभाव में हमारी सांस्कृतिक जड़ें कमजोर न हों और हमारी पहचान तथा आत्मसम्मान सुरक्षित रहे। गांधीजी का यह कथन कि "हमें नई विचारधाराओं के लिए खुले रहना चाहिए, परंतु हमारी जड़ें मजबूत रहनी चाहिए" आज भी प्रासंगिक है।

भारत में मूल्य-आधारित जीवन-शैली का महत्व लंबे समय से स्थापित रहा है। मूल्य ही वे तत्व हैं जो व्यक्ति को आंतरिक शांति, आत्म-स्थिरता, नैतिक बल और मानसिक ऊँचाई प्रदान करते हैं। मूल्य जीवन को केवल भौतिक दृष्टि से नहीं, बल्कि आध्यात्मिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी समृद्ध बनाते हैं। एक मूल्य-प्रधान समाज में पारिवारिक संबंध मजबूत होते हैं, बुजुर्गों के प्रति सम्मान की भावना बनी रहती है, पारिवारिक सहयोग बढ़ता है और सामाजिक सौहार्द स्वभाविक रूप से विकसित होता है। भारतीय समाज के विभिन्न समुदायों और धर्मों में यह देखा गया है कि लगभग सभी परंपराओं में नैतिकता, सहिष्णुता और सामाजिक सहयोग को प्राथमिकता दी जाती है। इसी कारण भारत में योग, प्राणायाम और ध्यान जैसी जीवन-शैली की प्रथाएँ महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। आधुनिक युग की युवा पीढ़ी भी अब योग और ध्यान के महत्व को समझ रही है और इन्हें अपनाने लगी है। इसके अलावा भारत में धार्मिक आस्था और प्रार्थना का भी गहरा प्रभाव है। कई परिवारों में दिन की शुरुआत और समाप्ति प्रार्थना या ध्यान से होती है, जो व्यक्ति के मन को शांति, सकारात्मकता और आत्म-नियंत्रण प्रदान करती है।

छात्रों के शैक्षिक जीवन में संवेगों का प्रभाव

छात्रों के शैक्षिक जीवन में भावनाओं का प्रभाव अत्यधिक महत्वपूर्ण होता है। सकारात्मक और नकारात्मक दोनों प्रकार की भावनाएँ सीधे तौर पर उनके शारीरिक स्वास्थ्य, सीखने की क्षमता, उपलब्धि और सामाजिक अनुकूलन को प्रभावित करती हैं। जिन छात्रों में संवेगात्मक संतुलन होता है, उनमें आत्म-विश्वास, आत्म-नियंत्रण, प्रभावी संवाद, सहयोग की भावना और सामाजिक समझ विकसित होती है। ऐसे विद्यार्थी न केवल अपने परीक्षण में बेहतर परिणाम देते हैं, बल्कि वे स्कूल के सामाजिक माहौल में भी सकारात्मक भूमिका निभाते हैं।

वहीं, यदि छात्र अपनी भावनाओं को नियंत्रित नहीं कर पाते या उन्हें उचित रूप से व्यक्त नहीं कर पाते, तो उनमें आक्रामकता, अवसाद, तनाव और असंतुलन जैसी स्थितियाँ उत्पन्न हो सकती हैं। इससे उनके आत्मविश्वास में गिरावट, निराशा, आत्म-नियंत्रण की कमी और मानसिक परिपक्वता में कमी दिखाई देती है। यह स्थिति उनके संज्ञानात्मक पद्धतियों पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालती है, जैसे कि स्मृति, ध्यान, सोच-विचार और निर्णय-क्षमता में कमी आना। इसलिए संवेगात्मक संतुलन का विकास न केवल मनोस्वास्थ्य के लिए आवश्यक है, बल्कि शैक्षिक सफलता और सामाजिक अनुकूलन के लिए भी अत्यंत आवश्यक है।

‘छात्राध्यापकों के शिक्षण विषयों के परिप्रेक्ष्य में संवेगात्मक बुद्धि, अनुकूलन तथा मूल्यों का परीक्षण।

- 1. आकांक्षा की सीमा:** यदि व्यक्ति की इच्छाएँ उसकी योग्यता और संसाधनों के अनुरूप हों तो वह संतुष्टि और सामंजस्य का अनुभव करता है। अत्यधिक ऊँची या बहुत कम आकांक्षाएँ असंतोष और अनुकूलन को बढ़ाती हैं।
- 2. सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति:** व्यक्ति की सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक स्थिरता उसके जीवन-स्तर, अवसरों तथा आत्मविश्वास को प्रभावित करती है, जिससे उसका अनुकूलन भी प्रभावित होता है।
- 3. अभिभावकों की सामाजिक मान्यता:** माता-पिता या अभिभावकों की सामाजिक प्रतिष्ठा तथा उनका व्यवहार बच्चे के आत्मसम्मान और सामाजिक स्वीकृति पर प्रभाव डालते हैं, जिससे अनुकूलन पर असर पड़ता है।
- 4. शहरी या ग्रामीण परिवेश:** शहरी और ग्रामीण जीवन में सुविधाएँ, जीवनशैली और सामाजिक संपर्क अलग-अलग होते हैं। इसलिए व्यक्ति का अनुकूलन भी अलग ढंग से विकसित होता है।
- 5. चिंता और निराशा:** अत्यधिक चिंता, तनाव या मानसिक कुंठा व्यक्ति की सोच, निर्णय क्षमता और व्यवहार को प्रभावित करती है, जिससे अनुकूलन में कठिनाई आती है।
- 6. संवेगात्मक स्थिति:** व्यक्ति की भावनाओं की तीव्रता, स्थिरता और उन्हें नियंत्रित करने की क्षमता अनुकूलन को गहराई से प्रभावित करती है।
- 7. परिवारिक माहौल:** परिवार में प्रेम, सहयोग, सुरक्षा और सकारात्मक संबंध होने से व्यक्ति में आत्मविश्वास और संवेगात्मक संतुलन विकसित होता है, जिससे अनुकूलन बेहतर होता है।
- 8. विद्यालय का वातावरण:** विद्यालय का अनुशासन, शिक्षक-छात्र संबंध, सहपाठी समूह और शैक्षिक परिवेश

बालक के सामाजिक तथा शैक्षिक अनुकूलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

- 9. स्वास्थ्य की स्थिति:** शारीरिक और मनोस्वास्थ्य अनुकूलन का आधार है। स्वस्थ व्यक्ति परिस्थितियों के अनुरूप आसानी से ढल सकता है।
- 10. लिंग और बुद्धि:** लिंग-भेद तथा बौद्धिक क्षमता व्यक्ति के अनुभव, अवसर और अपेक्षाओं को प्रभावित करती है, जिससे अनुकूलन में फर्क आता है।
- 11. शिक्षात्मक सफलता:** शिक्षण में उपलब्धि व्यक्ति के आत्मविश्वास, सामाजिक प्रतिष्ठा और भविष्य की संभावनाओं को प्रभावित करती है, जिससे अनुकूलन बेहतर या कमजोर होता है।
- 12. आत्म-धारणा:** व्यक्ति स्वयं को जिस दृष्टि से देखता है, उसी के अनुसार उसका व्यवहार और अनुकूलन आकार लेता है। यदि आत्म-धारणा सकारात्मक हो, तो अनुकूलन भी सकारात्मक होता है।

अनुकूलन के प्रकार

अनुकूलन का अर्थ हैकृष्यव्यक्ति का अपने जीवन, परिवेश और परिस्थितियों के साथ सामंजस्य स्थापित करना। यह विभिन्न रूपों में व्यक्त होता है, जिनमें प्रमुख प्रकार निम्नलिखित हैंरू

1. संवेगात्मक अनुकूलन

संवेगात्मक अनुकूलन का संबंध व्यक्ति की भावनाओं को नियंत्रित करने से होता है। व्यक्ति के भीतर भावनाएँ तीव्रता के साथ उत्पन्न होती हैं और उसके व्यवहार को प्रभावित करती हैं। यदि भावनाओं पर नियंत्रण न हो, तो व्यक्ति आवेगपूर्ण, अस्थिर और अनियंत्रित व्यवहार कर सकता है। शिक्षण, अनुभव और सामाजिक अनुशासन व्यक्ति को यह सिखाते हैं कि भावनाओं को सकारात्मक दिशा में कैसे नियंत्रित किया जाए। संवेगात्मक रूप से समायोजित व्यक्ति अपने क्रोध, चिंता, भय, प्रसन्नता आदि भावों को नियंत्रित कर सकता है। वह परिस्थितियों के अनुसार अपने व्यवहार को ढाल लेता है और कठिन समय में भी धैर्य बनाए रखता है। मानसिक संतुलन और शारीरिक स्वास्थ्य के समन्वय से ही संवेगात्मक संतुलन संभव होता है।

2. सामाजिक अनुकूलन

सामाजिक अनुकूलन का अर्थ हैकृष्यसमाज और समुदाय के नियमों, परंपराओं और सामाजिक अपेक्षाओं के साथ सामंजस्य स्थापित करना। समाज में प्रत्येक व्यक्ति से अपेक्षा की जाती है कि वह सामाजिक नियमों का पालन करे और सामूहिक जीवन के अनुरूप व्यवहार करे।

बच्चे सामाजिक व्यवहार की शिक्षण सबसे पहले परिवार से प्राप्त करते हैं और बाद में समाज से। जब परिवार में सामाजिक गतिविधियाँ, सहयोग और अच्छे आचार-व्यवहार को महत्व दिया जाता है, तब बच्चे भी उन्हीं मान्यताओं को अपने जीवन में अपनाते हैं। समाज में रहने और सामाजिक संबंधों को निभाने से ही व्यक्ति का व्यक्तित्व विकसित होता है, इसलिए सामाजिक अनुकूलन का महत्व अत्यधिक होता है।

3. शैक्षिक अनुकूलन

शैक्षिक अनुकूलन का संबंध विद्यालयी जीवन से है। विद्यालय में विद्यार्थी को केवल परीक्षण ही नहीं करना होता, बल्कि शिक्षकों,

सहपाठियों, विद्यालय के नियमों और अनुशासन के साथ भी तालमेल बैठाना पड़ता है।

शिक्षक का व्यवहार विद्यार्थियों के अनुकूलन में अहम भूमिका निभाता है। जो शिक्षक स्नेह, सहयोग और समझदारी के साथ व्यवहार करते हैं, उनके साथ छात्र आसानी से तालमेल बैठा लेते हैं। वहीं, यदि शिक्षक कठोर और दंडात्मक रवैया अपनाते हैं, तो विद्यार्थी असमंजस और तनाव का अनुभव कर सकते हैं। इसलिए विद्यालय में ऐसा वातावरण होना चाहिए जहाँ शिक्षक-छात्र के बीच सम्मान, सहयोग और आपसी समझ बनी रहे, ताकि विद्यार्थी का शैक्षिक, मानसिक और सामाजिक विकास सुचारु रूप से हो सके।

मूल्य का अर्थ

मूल्य वह नैतिक और सामाजिक मानदंड हैं जो व्यक्ति के आचरण, सोच और व्यवहार को दिशा देते हैं। ये जीवन के निर्णयों, व्यवहारिक विकल्पों और सामाजिक संबंधों में स्थिरता और संतुलन बनाए रखते हैं। मूल्य व्यक्ति के अंदर नैतिकता, जिम्मेदारी, सहानुभूति, सत्यता और अनुशासन जैसी गुणों का विकास करते हैं।

शिक्षण और मूल्य निर्माण

शिक्षण मूल्य निर्माण की पद्धति में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। शिक्षण के दौरान जो गतिविधियाँ प्रमुख रूप से की जाती हैं, उन्हें समाज और शिक्षात्मक क्षेत्र में अत्यधिक महत्वपूर्ण माना जाता है, क्योंकि इन्हीं गतिविधियों के जरिया से विद्यार्थी ज्ञान, कौशल और दृष्टिकोण विकसित करते हैं। शिक्षक इन शैक्षिक गतिविधियों के अनुसार अपने शिक्षण के तरीके, तकनीक और रणनीतियाँ तैयार करता है। ये गतिविधियाँ अक्सर पाठ्यक्रम की प्रकृति, शिक्षण पद्धति और शिक्षक की योग्यता पर निर्भर करती हैं।

शैक्षिक गतिविधियाँ केवल जानकारी देने तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि ये शिक्षण के उद्देश्य को भी प्रत्यक्ष करती हैं। इनके जरिया से विद्यार्थी में गुण, आदतें, क्षमताएँ और विशेष कौशल विकसित होते हैं, जिन्हें शैक्षिक मूल्य कहा जा सकता है। पाठ्यक्रम की रूपरेखा, विषयों का वरण और शिक्षण की योजनाएँ बनाते समय शिक्षक और शिक्षण विशेषज्ञ शिक्षण के उद्देश्यों को प्राथमिकता देते हैं। इन उद्देश्यों के अनुसार ही विद्यार्थी में मूल्य विकसित होते हैं और उनका विकास निरंतर जारी रहता है।

मूल्य वह मानदंड है जिसके द्वारा व्यक्ति के गुण, विशेषताएँ और व्यवहार को महत्व दिया जाता है। मूल्य के कारण ही किसी व्यक्ति को समाज में सम्मान, प्रतिष्ठा और मान्यता मिलती है। ये गुण व्यक्ति के अंदरूनी स्वभाव से भी जुड़े हो सकते हैं, जैसे ईमानदारी, करुणा, साहस, आत्म-नियंत्रण आदि, और बाहरी रूप से भी प्रकट हो सकते हैं, जैसे उपलब्धियाँ, सामाजिक भूमिका और कार्यकुशलता। इस प्रकार मूल्य व्यक्ति के व्यक्तित्व को आकार देते हैं और उसे समाज में पहचान दिलाते हैं।

मूल्य का व्यक्ति की पसंद, रुचि और आकांक्षाओं से गहरा संबंध होता है। जिस वस्तु, विचार या लक्ष्य को व्यक्ति अधिक महत्वपूर्ण मानता है, वह उसके लिए मूल्यवान बन जाता है और उसे पाने के लिए प्रयत्न करता है। इस प्रकार मूल्य व्यक्ति के दृष्टिकोण और महत्व की भावना को बढ़ाते हैं। व्यवहारिक दृष्टि से देखा जाए तो मानव की आवश्यकताओं और इच्छाओं की पूर्ति ही मूल्य का आधार होती है। अर्थात् जिन वस्तुओं या अनुभवों से व्यक्ति को संतोष मिलता है, वे उसके लिए मूल्यवान बन जाते हैं।

मूल्य हमारी प्राथमिकताओं को भी प्रत्यक्ष करते हैं। जीवन में व्यक्ति के सामने अनेक विकल्प होते हैं, जैसे धन, शक्ति, प्रतिष्ठा, ज्ञान, सेवा आदि। इनमें से कौन-सा विकल्प पहले चुना जाए, यह व्यक्ति के मूल्य निर्णय पर निर्भर करता है। उदाहरण के तौर

पर, यदि कोई व्यक्ति धन, शक्ति और नामकृद्दण तीनों को महत्व देता है, तो वह इनमें एक क्रम तय करता है। मान लीजिए वह धन को प्रथम, शक्ति को द्वितीय और नाम को तृतीय स्थान देता है। यह क्रम दिखाता है कि उसने सापेक्ष मूल्यांकन के अनुसार निर्णय लिया है। इसी अनुसार वह अपने लक्ष्य और प्रयास तय करता है।

मूल्य निर्धारण तभी संभव है जब व्यक्ति के सामने विकल्प प्रत्यक्ष और उपलब्ध हों। जब हम विभिन्न विकल्पों में से वरण करते हैं, तो यह आवश्यक होता है कि वे विकल्प हमारे सामने मौजूद हों या कम से कम सैद्धांतिक रूप से प्राप्त किए जा सकें। दूसरे शब्दों में, मूल्य-निर्धारण तब ही संभव है जब वरण की स्वतंत्रता और विकल्पों की प्रत्यक्षता हो।

Conclusion

परीक्षण के दौरान परीक्षणकर्ता ने कई ऐसे बिंदु चिन्हित किए हैं, जिन्हें ध्यान में रखते हुए भविष्य के अनुसंधानकर्ताओं के लिए निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा रहे हैं:

1. परीक्षण का विस्तार और नमूना आकार

वर्तमान परीक्षण सीमित क्षेत्र और छोटे नमूने पर आधारित है। भविष्य में इसे अधिक व्यापक क्षेत्र और बड़े नमूने पर दोहराया जाना चाहिए ताकि निष्कर्षों की सामान्यता और विश्वसनीयता बढ़ सके।

2. अन्य शिक्षात्मक स्तरों पर परीक्षण

यह परीक्षण माध्यमिक विद्यालयों तक सीमित है। इसी प्रकार का परीक्षण प्राथमिक, उच्च माध्यमिक या उच्च शिक्षण स्तर पर भी किया जा सकता है, जिससे विभिन्न स्तरों पर शिक्षकों के मनोवैज्ञानिक गुणों का सापेक्ष विश्लेषण संभव हो सके।

3. अन्य मनोवैज्ञानिक गुणों का समावेश

भविष्य के परीक्षण में संवेगात्मक बुद्धि के साथ-साथ अन्य मनोवैज्ञानिक पहलुओं जैसे अभिवृत्ति, रचनात्मकता, आत्मविश्वास, नेतृत्व क्षमता, प्रेरणा आदि का भी परीक्षण किया जा सकता है।

4. विज्ञान विषय के शिक्षकों का कक्षागत व्यवहार

माध्यमिक स्तर पर विज्ञान विषय के शिक्षकों के कक्षा-व्यवहार, शिक्षण शैली और कक्षा प्रबंधन का विश्लेषण किया जा सकता है, जिससे उनकी शिक्षण प्रभावशीलता का मूल्यांकन किया जा सके।

5. विभिन्न विषयों के शिक्षकों की अनुरूपता

विज्ञान, कला तथा कॉमर्स स्ट्रीम के शिक्षकों के शिक्षण व्यवहार का सापेक्ष परीक्षण किया जा सकता है, जिससे विषय-आधारित शिक्षण दृष्टिकोणों में फर्क प्रत्यक्ष हो सके।

6. भाषा एवं सामाजिक विज्ञान शिक्षकों का सापेक्ष विश्लेषण

माध्यमिक स्तर पर भाषा शिक्षकों और सामाजिक विज्ञान शिक्षकों के कक्षा-शिक्षण व्यवहार की अनुरूपता की जा सकती है, ताकि शिक्षण विधियों और समस्याओं की समझ विकसित हो सके।

7. अनुभव एवं योग्यता के अनुसार परीक्षण

शिक्षक-शिक्षिकाओं के शिक्षण अनुभव, शिक्षात्मक योग्यता और प्रशिक्षण के अनुसार उनके कक्षा-व्यवहार का परीक्षण किया जा सकता है।

8. विषयगत विविधता और व्यक्तित्व संबंध

विभिन्न विषयों के शिक्षकों के व्यक्तित्व और कक्षा-व्यवहार के बीच संबंधों की जाँच किया जा सकता है, जिससे विषय विशेष के अनुसार मनोवैज्ञानिक गुणों की भूमिका समझी जा सके।

9. भाषा शिक्षकों का सापेक्ष परीक्षण

माध्यमिक स्तर पर संस्कृत और अंग्रेजी के प्रशिक्षित शिक्षकों के कक्षा-व्यवहार की अनुरूपता की जा सकती है, जिससे भाषा शिक्षण की चुनौतियाँ और विधियों में फर्क प्रत्यक्ष हो सके।

References

1. Weng F. Language assessment literacy of teachers: Conceptualizations and empirical studies. *Language Assessment Quarterly Review (PMC)*, 2022.
2. Davison C. *Teacher-Based Language Assessment*. ResearchGate, 2004.
3. Zhang J, Yu G, Browne W. Teachers' language assessment literacy: A context-specific framework. *Studies in Educational Evaluation*, 2025, 87.
4. Pandey GP. *Language Testing Reimagined: Enhancing Teaching and Learning in English Education*. *Journal of Practical Studies in Education*, 2024.
5. Taylor L, Saville N. (Eds.). *Studies in Language Testing*. Cambridge University Press.
6. सेतु, भाषा परीक्षण और मूल्यांकन: भाषा शिक्षण के संदर्भ में, *Setu Magazine*, 2018.
7. Weng F. Language assessment literacy of teachers. *Language Assessment Quarterly*, 2022.
8. Davison C. *Teacher-based language assessment*. ResearchGate, 2004.
9. Zhang J, Yu G, Browne W. Teachers' language assessment literacy. *Studies in Educational Evaluation*, 2025, 87.
10. Pandey GP. *Language Testing Reimagined*. *Journal of Practical Studies in Education*, 2024.
11. Taylor L, Saville N. (Eds.). (1995–present). *Studies in Language Testing*. Cambridge University Press.